

व्यापारी के पुत्र की कहानी

किसी नगर में सागर दत्त नाम का एक व्यापारी रहता था। उसके लडके ने एक बार सौ रुपए में बिकने वाली एक पुस्तक खरीदी। उस पुस्तक में केवल एक श्लोक लिखा था - जो वस्तु जिसको मिलने वाली होती है, वह उसे अवश्य मिलती है। उस वस्तु की प्राप्ति को विधाता भी नहीं रोक सकता। अतएव मैं किसी वस्तु के विनष्ट हो जाने पर न दुखी होता हूँ और न किसी वस्तु के अनायास मिल जाने पर आश्चर्य ही करता हूँ। क्योंकि जो वस्तु दूसरों को मिलने वाली होगी, वह हमें नहीं मिल सकती और जो हमें मिलने वाली है, वह दूसरों को नहीं मिल सकती।

उस पुस्तक को देखकर सागर दत्त ने अपने पुत्र से पूछा - 'तुमने इस पुस्तक को कितने में खरीदा है?' पुत्र ने उत्तर दिया- 'एक सौ रुपए में।'

अपने पुत्र से पुस्तक का मूल्य जानकर सागर दत्त कुपित हो गया। वह क्रोध से बोला - 'अरे मूर्ख ! जब तुम लिखे हुए एक श्लोक को एक सौ रुपए में खरीदते हो तो तुम अपनी बुद्धि से क्या धन कमाओगे ? तुम जैसे मूर्ख को मैं अब अपने घर में नहीं रखूंगा।'

सागर दत्त का पुत्र अपमानित होकर घर से निकल पडा। वह एक नगर में पहुंचा। लोग जब उसका नाम पूछते तो वह अपना नाम प्राप्तव्य - अर्थ ही बतलाता। इस प्रकार वह 'प्राप्तव्य-अर्थ' के नाम से पहचाना जाने लगा। कुछ दिनों बाद नगर में एक उत्सव मनाया गया। नगर की राजकुमारी चंद्रावती अपनी सहेली के साथ उत्सव की शोभा देखने निकली। इस प्रकार जब वह नगर का भ्रमण कर रही थी तो किसी देश का राजकुमार उसकी दृष्टि में आ गया। वह उस पर मुग्ध हो गई और अपनी सहेली से बोली - 'सखि ! जिस प्रकार भी हो सके, इस राजकुमार से मेरा समागम कराने का प्रयास करो।'

राजकुमारी की सहेली तत्काल उस राजकुमार के पास पहुंची और उससे बोली - मुझे राजकुमारी चंद्रावती ने आपके पास भेजा है। उनका कहना है कि आपको देखकर उनकी दशा बहुत शोचनीय हो गई है। आप तुरंत उनके पास न गए तो मरने के अतिरिक्त उनके लिए अन्य कोई मार्ग नहीं रह जाएगा।' इस पर उस राजपुत्र ने कहा- "यदि ऐसा है तो बताओ कि मैं उनके पास किस समय और किस प्रकार पहुंच सकता हूं ?"

राजकुमारी की सहेली बोली -"रात्रि के समय उसके शयनकक्ष में चमड़े की एक मजबूत रस्सी लटकी हुई मिलेगी, आप उस पर चढ़कर राजकुमारी के कक्ष में पहुंच जाना।"

इतना बताकर राजकुमारी की सहेली तो वापस लौट गई, और राजकुमार रात्रि के आगमन की प्रतीक्षा करने लगा। किंतु रात हो जाने पर कुछ सोचकर उस राजपुत्र ने राजकुमारी के कक्ष में जाना एकाएक स्थगित कर दिया। संयोग की बात है कि व्यापारी पुत्र 'प्रातव्य-अर्थ' उधर से ही निकल रहा था। उसने रस्सी लटकी देखी तो वह उस पर चढ़कर राजकुमारी के कक्ष में पहुंच गया। राजपुत्री ने भी उसको राजकुमार समझ उसका खूब स्वागत - सत्कार किया, उसको स्वादिष्ट भोजन खिलाया और अपनी शय्या पर उसे लिटाकर स्वयं भी लेट गई।

व्यापारीपुत्र के स्पर्श से रोमांचित होकर उस राजकुमारी ने कहा - "मैं आपको दर्शनमात्र से ही अनुरक्त होकर आपको अपना हृदय दे बैठी हूं। अब आपको छोड़कर किसी और को पति रूप में वरण नहीं करूंगी।"

व्यापारीपुत्र कुछ नहीं बोला। वह शांत पड़ा रहा। इस पर राजकुमारी ने कहा - 'आप मुझसे बोल क्यों नहीं रहे हैं, क्या बात है ?' तब व्यापारीपुत्र बोला - 'मनुष्य प्राप्तक वस्तु को प्राप्त कर ही लेता है।' यह सुनकर राजपुत्री को संदेह हो गया। उसने तत्काल उसे अपने शयनकक्ष से बाहर भगा दिया। व्यापारीपुत्र वहां से निकलकर एक जीर्ण - शीर्ण मंदिर में विश्राम करने चला गया। संयोग की बात है कि नगररक्षक अपनी प्रेमिका से मिलने उसी मंदिर में आया हुआ

था। उसे देखकर उसने पूछा - “आप कौन हैं?” व्यापारीपुत्र बोला - ‘मनुष्य अपने प्राप्तव्य अर्थ को ही प्राप्त करता है।’ नगररक्षक बोला- “यह तो निर्जन स्थान है। आप मेरे स्थान पर जाकर सो जाइए।’ व्यापारीपुत्र ने उसकी बात को स्वीकार तो कर लिया, किंतु अर्द्धनिद्रित होने के कारण भूल से वह उस स्थान पर न जाकर किसी अन्य स्थान पर जा पहुंचा।

उस नगररक्षक की कन्या विनयवती भी किसी पुरुष के प्रेम में फंसी हुई थी। उसने उस स्थान पर आने का अपने प्रेमी को संकेत दिया हुआ था, जहां कि प्राप्तव्य-अर्थ पहुंच गया था। विनयवती वहां सोई हुई थी। उसको आते देखकर विनयवती ने यही समझा कि उसका प्रेमी आ गया है। वह प्रसन्न होकर उसका स्वागत - सत्कार करने लगी। जब वह व्यापारीपुत्र के साथ अपनी शैया पर सोई तो उसने पूछा - क्या बात है, आप अब भी मुझसे निश्चिंत होकर बातचीत नहीं कर रहे हैं?’ व्यापारीपुत्र ने वही वाक्य दोहरा दिया-‘मनुष्य अपने प्राप्तव्य-अर्थ को ही प्राप्त करता है।’ विनयवती समझ गई कि बिना विचारे करने का उसको यह फल मिल रहा है। उसने तुरंत उस व्यापारीपुत्र को घर से बाहर जाने का रास्ता दिखा दिया। व्यापारीपुत्र एक बार फिर सड़क पर आ गया। तभी उसे सामने से आती एक बारात दिखाई दी। वरकीर्ति नामक वर बड़ी धूमधाम से अपनी बारात लेकर जा रहा था। वह भी उस बारात में शामिल होकर उनके साथ-साथ चलने लगा। बारात अपने स्थान पर पहुंची, उसका खूब स्वागत - सत्कार हुआ।

विवाह का मुहूर्त होने पर सेठ की कन्या सज-धजकर विवाह-मंडप के समीप आई। उसी क्षण एक मदमस्त हाथी अपने महावत को मारकर भागता हुआ उधर आ पहुंचा। उसे देखकर भय के कारण सभी बाराती वर को लेकर वहां से भाग गए। कन्या-पक्ष के लोग भी घबराकर घरों में घुस गए। कन्या उस स्थान पर अकेली रह गई। कन्या को भयभीत देखकर ‘प्राप्तव्य-अर्थ’ ने उसे सांत्वना दी- ‘डरो मत। मैं तुम्हारी रक्षा करूंगा।’ यह कहकर उसने एक हाथ से उस कन्या को संभाला और दूसरे हाथ में एक डंडा लेकर हाथी पर पिल पडा। डंडे की चोट से भयभीत होकर वह हाथी सहसा वहां से भाग निकला। हाथी के चले जाने पर

वरकीर्ति अपनी बारात के साथ वापस लौटा, किंतु तब तक विवाह का मुहूर्त निकल चुका था। उसने देखा कि उसकी वधू किसी अन्य नौजवान के साथ सटकर खड़ी हुई है और नौजवान ने उसका हाथ थामा हुआ है। यह देखकर उसे क्रोध आ गया और अपने ससुर से बोला- “आपने यह उचित नहीं किया। अपनी कन्या का हाथ मेरे हाथ में देने के स्थान पर किसी अन्य के हाथ में दे दिया है।” उसकी बात सुनकर सेठ बोला- ‘मुझे स्वयं भी नहीं मालूम कि यह घटना कैसे घटी। हाथी के डर से मैं भी तुम सब लोगों के साथ यहां से भाग गया था, अभी-अभी वापस लौटा हूं।’

सेठ की बेटी बोली- पिताजी। इन्होंने ही मुझे मृत्यु से बचाया है, अतः अब मैं इनको छोड़कर किसी अन्य के साथ विवाह नहीं करूंगी। इस प्रकार विवाद बढ़ गया, और रात्रि भी समाप्त हो गई। प्रातःकाल वहां भीड़ इकट्ठी हो गई। राजकुमारी भी वहां पहुंच गई थी। विनयवती ने सुना तो वह भी तमाशा देखने वहां जा पहुंची। स्वयं राजा भी इस विवाद की बात सुनकर वहां चला आया। उसने व्यापारीपुत्र से कहा -‘युवक ! तुम निश्चिंत होकर सारी घटना का विवरण मुझे सुनाओ।’ व्यापारीपुत्र ने उत्तर में यही कहा-‘मनुष्य प्राप्तव्य अर्थ को ही प्राप्त करता है।’ उसकी बात सुनकर राजपुत्री बोली-विधाता भी उसको नहीं रोक सकता।’ तब विनयवती कहने लगी-‘इसलिए मैं विगत बात पर पश्चाताप नहीं करती और मुझको उस पर कोई आश्चर्य नहीं होता।’ यह सुनकर विवाह-मंडप में आई सेठ की कन्या बोली - ‘जो वस्तु मेरी है, वह दूसरों की नहीं हो सकती।’

राजा के लिए यह सब पहली बन गया था। उसने सब कन्याओं से पृथक-पृथक सारी बात सुनी। और जब वह आश्वस्त हो गया तो उसने सबको अभयदान दिया। उसने अपनी कन्या को सम्पूर्ण अलंकारों से युक्त करके, एक हजार ग्रामों के साथ अत्यंत आदरपूर्वक ‘प्राप्तव्य - अर्थ को समर्पित कर दिया। इतना ही नहीं उसने उसे अपना पुत्र भी मान लिया। इस प्रकार उसने उस व्यापारीपुत्र को युवराज पद पर प्रतिष्ठित कर दिया। नगररक्षक ने भी उसी प्रकार अपनी कन्या विनयवती उस व्यापारीपुत्र को सौंप दी। तीनों कन्याओं से विवाह कर व्यापारीपुत्र

आनंदपूर्वक राजमहल में रहने लगा। बाद में उसने अपने समस्त परिवार को भी वहां बुला लिया।

सीख : दाने दाने पर लिखा है खाने वाले का नाम

यह कथा समाप्त कर हिरण्यक ने कहा-‘इसलिए मैं कहता हूं कि मनुष्य अपने प्रातव्य अर्थ को ही प्राप्त करता है। इस प्रकार अनुचरों से खिन्न होकर मैं आपके मित्र लघुपतनक के साथ यहां चला आया हूं। यही मेरे वैराग्य का कारण है।’

हिरण्यक की बात सुनकर मंथरक कछुए ने कहा - मित्र हिरण्यक ! तुम नष्ट धन की चिंता मत करो ! जवानी और धन का उपयोग तो क्षणिक ही होता | पहले तो धन के अर्जन में ही कष्ट होता है और बाद में उसके संरक्षण में भी कष्ट होता है। जितने कष्टों से मनुष्य धन का संचय करता है उसके शतांश कष्टों से भी यदि वह धर्म का संचय करे तो उसे मोक्ष मिल जाता है। तुम विदेश-प्रवास का भी दुख मत करो, क्योंकि व्यवसायी के लिए कोई स्थान दूर नहीं होता और विद्वान व्यक्ति के लिए कोई स्थान परदेश नहीं होता। साथ ही किसी प्रियवादी व्यक्ति के लिए कोई व्यक्ति पराया नहीं होता। तुम निर्भय होकर यहां रहो। हम तीनों अच्छे मित्रों की भांति मिलकर जीवन-निर्वाह करेंगे। रही धन जाने की बात, तो धन कमाना तो भाग्य पर निर्भर करता है। भाग्य में न हो तो संचित धन भी नष्ट हो जाता है। अभाग्य आदमी तो धन को संचित करके भी उसका उपभोग उसी तरह नहीं कर पाता, जिस तरह सोमिलक नहीं कर पाया था। हिरण्यक ने पूछा - ‘यह सोमिलक कौन था ?’ तब मंथरक कछुए ने उसे यह कथा सुनाई।

वृषारी क पेड़ की कटाई

किमी नगर भोगर ऋतुनाम का एक वृषारी रूठु था। उमक लेरुक ने एक मर में वृषार भोगरन वाली एक पम्कू लपरीसी। उम पम्कू भकेवल एक मक्के लापा था - ए वेमूस्मिक भिलन वाली रुठी रु, वेरु उम मेवम भिलनी का उम वमूकी प्पिकू विणुग ही नलीं रके मकडा। मउरव भकिमी वमूक विनपलू ऐन पर न र्पि रुठे रु, एर न किमी वमूक मेनयम भिल ऐन पर मुमकू नी करडा रु, कृकि ए वेमूस्मिक भिलन वाली रुठी, वरु रुभनेलीं भिल मकडी एर ए केभभिलन वाली रु, वेरु र्पिकू केनेलीं भिल मकडी।

उम पम्कू क र्पिकर भागर ऋतुन मेपन पेड़म पेकू - 'उभन उम पम्कू क किउन भे लपरीस रु? पेड़ न उउरु र्पिवा - 'एक भे वृषार भे'

मेपन पेड़म पेकू का भलू ऐनकर भागर ऋतुकुपिउ रु गेवा। वरु कृपे म गेली - 'मर भलू ! एर उभु लाप रुए एक मक्के क एक भे वृषार भे लपरीस रु उ उभु मेपनी गम्भिम कृ एन कभाउग ? उभु एमे भलू क भेमेर मेपन पर भनेलीं रापगा।'

भागर ऋतुका पेड़ मेपभानिउ रुकेर अर भानिकल पडा। वरु एक नगर भपेरुगा लगे एर उमका नाम पकूउ उ वेरु मेपन नाम प्पुवृ - मरू नी गउलाडा। उम प्कार वरु 'प्पुवृमरू' क नेभम भपेरुगा ना ऐन लेगा। ककु र्पिन गेए नगर भएक उउरु भनय गवा। नगर की राएकभारी एंएवडी मेपनी मरुली क भेष उउरु की महे र्पिन निकली। उम प्कार एर वरु नगर का रुभन कर रली घी उ किमी र्मे का राएकभार उमकी र्पिभमे गवा। वरु उम पर भगू रु गेरे एर मेपनी मरुली म गेली - 'भपि ! र्पिम प्कार ही रुभेक, उम राएकभार भ भेरे भभागभ करान के प्थम करा।'

राएकभारी की मरुली उउरु उम राएकभार क पाम पकूगी एर उमम गेली - भए राएकभारी एंएवडी न मेपक पाम रुए का उउनका ककन रुकि मुपक र्पिकर उनकी र्मा मरुडु मरेनीय रु गेरे का मेप उरु उ उनक पाम न गा उ भेरन के मेडिरिकु, उनक लाप मरुकरे भान नलीं रु एरगा। उम पर उम राएपेड़न केका - 'घदि र्पिवा रु उ गेडाउ कि भ उउनक पाम किम मभय एर किम प्कार पकूग मकडा रु?'

राएकभारी की मरुली गेली - "राडि क मेभय उमक मेघनक र्भ भेभरु की एक भएरु रभिल एकी रुं भिलगी, मुप उम पर एरकर राएकभारी क केर भपेरुग ऐना।"

उउन गउकर राएकभारी की मरुली उ वेपम लेए गरं, एर राएकभार राडि क मुगभन की पडीवा करन लेगा। किउरु उ रु ऐन पर ककु मरेकर उम राएपेड़न राएकभारी क केर भऐना एकाएक मगिउ कर र्पिवा। मधगे की गउ रुकि वृषारी पेड़ 'प्पुवृमरू' उएर मकी निकल रुका था। उमन रभिल एकी र्पि उ वेरु उम पर एरकर राएकभारी क केर भपेरुग गवा। राएपेड़ न ही उमक राएकभार भभा उमका पम भगुउ - मउरु किवा, उमक भेद्विपलू ऐन पिपलावा एर मेपनी मघु पर उम लिएकर मधुं ही लेए गरं।

वटपारीपट्टू क मेष मरे भोगिउ रुकेर उम राएकुभारी न केला - "भेषपक ऐवनभाउ म की मनरु रुकेर मुपक मेषना रुच्य ए गेरी का मग मुपक के केकर किमी उर क पेडि रपु भवेर" नकी करगुी।

वटपारीपट्टू ककु नकी गले। वरु माउ पठा रला। उम पर राएकुभारी न केला - "मुप भुम गेले कनेकीं ररु के, कट्टु गउ रु?" उम वटपारीपट्टू गले - "भनपुपुपुपु वमुक पुपु कर की लउे काँचरु मजकर राएपट्टी क भेके के गेया। उमन उेअल उम मेषन मघनकर म गोरु रग मिया। वटपारीपट्टू वरु म निकल कर एक सीरु - मीरु भेदि भवेमभ करन गेला गया। मंघगे की गउ रुके नगररु क मपनी पुभिका म भिलन उेमी भेदि भवेया रुमु घा। उम ऐपेकर उमन पेला - "मुप के न रु?" वटपारीपट्टू गले - "भनपुपुपुपु पुपुपुपु क की पुपुकरउ काँचनगररु क गले - "घर उ निरुन भुन काँचुप भे भुन पर एकर म रेडग। वटपारीपट्टू न उेमी गउ क मीकर उ केर लिया, किउ मुगुनिदि रुने के केकर" रुलु म वेर उम भुन पर न एकर किमी मनटभुन पर ए पकंग।

उम नगररु क की कनट्टु विनघवती ही किमी पुरुष क पेमे भेदी रुं घी। उमन उम भुन पर मुन के मपन पेमी क भेकेउे मिया रुमु घा, एकां कि पुउवट्टु पकंग गया घा। विनघवती वरु मरु रुं घी। उमक मुउ ऐपेकर विनघवती न घेनी मभाए कि उमका पुमी मु गया काँचरु पुमरुकेर उमका भुगउ - मअल करन लेगी। एरु वरु वटपारीपट्टू क मेष मपनी मघे पर मरु उ उेमन पेला - कट्टु गउ रु, मुप मग ही भुम निमिउ रुकेर गउगीउ नकी कर रुकेर? वटपारीपट्टू न वेनी वरुकेर मिया - "भनपुपुपुपु मपन पुपुपुपुपु क की पुपुकरउ काँच विनघवती मभाए गरु कि गिन विणार केरन का उमक घेरु लल भिल रला काँच उेमुउे उम वटपारीपट्टू क भेर म गोरु एन के राभु मिया मिया। वटपारीपट्टू एक मरु दिर मरु क पर मु गया। उही उम मभन मे मुती एक मरुउ मिया रं मी। वरु की गि, नभक वरु गही एभणभ म मेषनी मरुउ लकेर ए रला घा। वरु ही उम मरुउ म मभिल रुकेर उनक मेष-मेष गलन लेगा। मरुउ मपन भुन पर पकंगी, उमका पवु भुगउ - मअल रुमु।

विवारु का भुरु रुने पर मरे की कनट्टु मए-एकर विवारु-भरुप क मेभीप मुं। उमी रु ए क भुमभुका घी मपन भेकावउ क भेरकर हागउ रुमु उणर मु पकंग। उम ऐपेकर रुच क केरु मरी मरुती वरु क लेकेर वरु म हाग गा। कनट्टु-पु क लेगी ही अरुकर अरु भेभु गग। कनट्टु उम भुन पर मकली रु गरी। कनट्टु क हेवतीउ ऐपेकर 'पुपुपुपुपु' न उेम मउेवा मी-रु भेउ भेउभुगी ररु करगु। घरु करुकर उमन एक काष म उेम कनट्टु क भेहाला उर एमरु काष भेरु रुं लकेर काषी पर पिल पठा। रुं के गे म हेवतीउ रुकेर वरु काषी मरुभा वरु म हाग निकला। काषी क गेल एन पर वरु की गि, मपनी मरुउ क मेष वपम लोए, किउ उर उक विवारु का भुरु, निकल गका घा। उमन ऐपे कि उमकी वणकिमी मनट्टु एवत क मष मएकर पगी रुं रुं नै एवत न उेमका काष घाभा रुमु काँचरु ऐपेकर उम केरे मु गया उर मपन मेभु म गेले - "मुपन घेरु उगिउ नकी किया। मपनी कनट्टु का काष भेरु काष भेके के भुन पर किमी मनट्टु काष भेके मिया काँ उमकी गउ मजकर मरे गेले - "भु मेषु ही नकी भालभ कि घरु अएना क मेपेपी। काषी क केर म मे ही उभु म लगे के मेष वरु म हाग गया घा, मरी-मरी वपम लोए रुं।

मठ की गली गली- पिताली। उनही की भ्रा भ्रा मठ गथा रु, मठ: मठ भवन क ठेके कर
 किमी मनुक भाष विचार नली करगु। उम प्रकार विचार मठ गथा, उर राति ही
 मभापु, रु गेरी। पूत: काल वरुं ही उ उकली रु गेरी। राएरुभारी ही वरुं पकुर गरी घी।
 विनववती न मजा उ वेरु ही उभासा एपिन वेरुं ए पकुरगी। मझं राए ही उम विचार की
 मउ मजकर वरुं गला मुया। उमन वटपारीपु, म केला - 'ब्रुक ! उमु निमिडु रुकेर
 भारी अएन का विवरुं भ्रा मजाउ।' वटपारीपु, न उउमु भवेनी कला - 'भनपु, पु, पु, पु,
 मरु क की पु, पु, करउ का उमकी मउ मजकर राएपु, गली-विणउ ही उमक नेली
 रके मकउ।' उम विनववती करन लेगी - 'उमलिर भवेगउ मउ पर पमरु, प नली करती
 उर भ्रा क उम पर करे मुसदु नली रुते।' वरु मजकर विचार-भंरुप भंरुं मठ की
 कनट गली - 'ए वेम, भरी रु, वेरु एभर की नली रु भेकती।'

राए क लिर वरु मठ पकुरी म न गथा घ। उमन मेम कनटुं म पेषक-पेषक भारी मउ
 मजी। उर एम वरु मुसधु, रु गेया उ उमन मेम क मेरुवएन एिया। उमन मेपनी कनट क
 ममरु मलंकर भे वेरु, करक, एरु रुएर गभ के भाष मउउ मुएरपत्रक 'पु, पु, पु, - मरु
 क भेभगिडु कर एिया। उउन ही नली उमन उम मेपन पु, ही भान लिया। उम प्रकार
 उमन उम वटपारीपु, क वेरु राए पए पर पडिधिरु कर एिया। नगररु, क न ही उमी
 प्रकार मेपनी कनट विनववती उम वटपारीपु, क भेप एी। डीन केनटुं म विचार कर
 वटपारीपु, मुन ए पत्रक राएभरुल भरेरुन लेगा। मठ भ उमन मेपन मेमभ, परिवार क
 ही वरुं गला लिया।

भीप : एन एन पर लिरा रु पान वेल के नभ

वरु कषा मभापु, कर किरु, क न केला - 'उमलिर भवेरुउ रुंकि भनपु, मुपन पु, उवट
 मरु क की पु, पु, करउ का उम प्रकार मजाउ भे गिपन रुकेर भवेपक भिडु, लपु, उनक क
 भाष वरुं गला मुया का, वली भरे वेरु, ग, का करु का।'

किरु, क की मउ मजकर भंरु क कळार न केला - भिडु किरु, क ! उमु नपु, एन की
 गिउं भउ करे। एवानी उर एन का उपघगे उ वेरु, क ही रुते | परुल उ एन क
 मरुन भली कपु, रुते रु उर मठ भ उमक मेरु, म ही कपु, रुते का एएन के भे
 भनपु, एन का मंगथ करउ रु उमक मेरु, म कपु, ही वरु एरु, का मंगथ कर उ
 उम भेहे भिल एरु का उमु विरु, ए-पु, एम का ही एए भउ कर, केरु वरुभायी क लिर
 करे भ्रुन एरु नली रुते उर विरु, न वरु, क लिर करे भ्रुन परु, मे नली रुते। भाष ही
 किमी पिघवानी वरु, क लिर करे वरु, पु, राया नली रुते। उमु निरु, रुकेर वरुं रु
 रुम डीन वेरु, भिडु, की रुति भिल कर एीवन-निवार करु, रेली एन एन की मउ, उ
 एन कभान उ रु, ग, पु, निरु, करउ का रु, ग, भु, ने रुते भेगिउ एन ही नपु, रुते का
 मरु, गा मु, मी उ एन क भेगिउ करक ही उमका उपरुगे उमी उरु नली कर पाउ,
 एम उरु मभिल क नली कर पाया घ। किरु, क नपु, क - 'वरु मभिल क कौन घ ?'
 उम भंरु क कळार न उम वरु कषा मजागै।